बदीउज़्ज़मा (1928-1986)

बदीउज़्ज़मा के चार उपन्यास बहुत मशहूर हुए हैं। 'एक चूहे की मौत' (1971) फ़ैंटेसी शैली में लिखा गया एक प्रतीकात्मक उपन्यास है। 'चूहाख़ाना' दफ़्तर का, 'चूहेमार' दफ़्तर के अफ़सरों और क्लर्कों का तथा 'चूहे' फाइलों के प्रतीक हैं। धीरे-धीरे 'चूहाख़ाना' आज की संवेदना-रहित दुनिया का प्रतीक बन जाता है। पूरे उपन्यास में आज की व्यवस्था को बनाए रखने वाले कार्यालयों के हास्यास्पद नियमों-उपनियमों, कर्मचारियों-अधिकारियों की प्रवृत्तियों तथा उनके अजीबोग़रीब तरीकों पर गहरा व्यंग्य किया गया है।

'छाको की वापसी' (1975) में लेखक ने बताया है कि देश का विभाजन ग़लत था। छोटी हैसियत के मुसलमानों के लिए पाकिस्तान का बनना या न बनना कोई मायने नहीं रखता। अपना वतन, अपनी ज़मीन, अपने लोग, अपनी संस्कृति एक दिन में नहीं बदली जा सकती। इससे टूटने का दर्द हमें भी बहुत गहरे में कहीं तोड़ देता है।

'अपुरुष' (1976) उपन्यास में प्राइवेट कॉलेजों के प्राध्यापकों की मानसिकता का बड़ा ही सजीव चित्र खींचा गया है। दरअसल कॉलेज तो एक बहाना है। मध्यवर्गीय नौकरी पेशा शिक्षित लोगों को अपनी रोज़ी-रोटी के लिए इतने समझौते करने पड़ते हैं कि वे 'अपुरुष' बुज़दिल और नपुंसक हो जाते हैं। इस तरह का पात्र घोष बाबू है जो दर्शनशास्त्र का प्रोफेसर है जो स्थितियों से समझौता करने को मज़बूर हो जाता है. लेकिन उसके मन की छटपटाहट तथा उसके मन का असंतोष बना रहता है।

'छठा तंत्र' (1977) आपातकाल में लिखा गया था जिसमें उस वक़्त की हालातों का बहुत अच्छा चित्रण है। यह उपन्यास भी एक तरह से प्रतीकात्मक है। जाकाब नगर के चूहे सनोबर नाम की बिल्ली से परेशान होकर उससे छापामार लड़ाई का फैसला करते हैं। बिल्लियाँ संधि कर लेती हैं। समझौते के बावजूद चूहों की संख्या घटती जाती है। चूहे अपने नेताओं से शिकायत करते हैं, लेकिन नेता भी बिल्लियों की तरह चूहों को खाने का स्वाद पा चुके हैं। इसलिए वे अब चूहों की बात का यक़ीन ही नहीं करते। सच्चाई यह है कि अपनी बिरादरी के लोग भी शोषकों के साथ रहकर उनकी जैसी सुविधाएँ पाकर उनके जैसा ही आचरण करते हैं।

'सभापर्व' (1994) का प्रकाशन लेखक की मृत्यु के बाद हुआ। यह आत्मकथात्मक शैली में लिखा गया है। लेखक के छात्र जीवन से आरंभ होकर देश के विभाजन की मनोभूमि तैयार होने तक के इतिहास को आधार बनाकर लिखे गए इस उपन्यास के माध्यम से कथाकार कहना चाहता है कि अंग्रेज़ों की कुटिल राजनीति के चलते सदियों से एक-दूसरे के साथ दोस्ती के साथ रहने वाले हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच नफ़रत की दीवार खड़ी हुई है जिससे देश के टुकड़े हुए। अंग्रेज़ अपनी नीति में इसलिए सफल हुए कि हिन्दुओं के मन में कहीं-न-कहीं वह ज़हर मौजूद था जो इतिहास छोड़ गया था। कुछ लोगों ने इस अपने मतलब के लिए अंग्रेज़ों का साथ दिया और उस जहर को सतह पर लाकर मुहरे के तौर पर इस्तेमाल किया। सच्चाई तो यह है कि अन्याय, घृणा, ईर्ष्या, द्वेष, शोषण की जो कहानी महाभारत के समय शुरु हुई वह आज भी पूरी नहीं हुई है। लोगों के चेहरे बदल गए हैं, लेकिन मन के भीतर पशुता आज भी जीवित है। शायद इसी वजह से लेखक ने उपन्यास का शीर्षक 'सभापर्व' रखा है। बदीउज़्ज़मा हिन्दी के बहुत ही ईमानदार लेखक थे।